Multidisciplinary Multilingual Research Journal, e-ISSN: 3107-8141
October-December 2025 | Volume: 01, Issue: 02, Page No.: 39-47
https://doi.org/10.64006/mmrj/1206

ORIGINAL ARTICLE |Received:08th August 2025 | Revised:24st September 2025 | Accepted:10th October 2025 | Published:18th December 2025

हिन्दी आदिवासी उपन्यास का विकास

डॉ. राज कुमार मीणा[1]

सारांश

यह शोधपत्र प्रस्तुत करता है कि हिन्दी आदिवासी उपन्यासों का विकास भारतीय साहित्य में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जिसने आदिवासी समाज की आवाज़ को साहित्य में मुखर किया। इसमें यह दिखाया गया है कि उपन्यास विधा केवल साहित्यिक रचना नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब है। आदिवासी उपन्यासों ने आदिवासी जीवन, संस्कृति, परंपराएँ और उनके संघर्षों को केंद्र में रखकर समाज में व्याप्त असमानताओं, गरीबी, भुखमरी, शोषण और प्रशासनिक संघर्षों को उजागर किया। यह अध्ययन यह भी रेखांकित करता है कि गैर-आदिवासी और आदिवासी दोनों प्रकार के लेखकों ने इस धारा को समृद्ध किया है। गैर-आदिवासी लेखकों ने आदिवासी समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि आदिवासी लेखकों ने अपनी संस्कृति, परंपराओं और जीवन संघर्षों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार यह शोधपत्र यह तर्क देता है कि आदिवासी उपन्यासों ने साहित्य में सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक संरक्षण और सामुदायिक एकता की दिशा में एक नई चेतना का संचार किया।

मुख्य शब्द: *:- हिन्दी आदिवासी उपन्यास, साहित्यिक विकास, संस्कृति और परंपरा, सामाजिक असमानता, शोषण और संघर्ष, सामुदायिक चेतना, महिला और आदिवासी जीवन*

This article is published under the **Creative Commons Attribution–Non-commercial (CC BY-NC) License**. Readers are free to share, adapt, and reproduce the material for non-commercial purposes, with appropriate credit to the author(s) and the source. Permission is required for any commercial use.

उपन्यास दो शब्द 'उप' और 'न्यास' के संयोग से बना है। 'उप' का अर्थ है- समीप और 'न्यास' का अर्थ है- रचना। अर्थात् वह रचना जिसे पढ़कर हमारे जीवन का प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ रहा हो, वह विधा उपन्यास कहलाती है। उपन्यास विधा में सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन को संपूर्णता में उभारने का प्रयास किया जाता है। हिंदी साहित्य की प्रमुख विधाओ में उपन्यास को सबसे आधुनिक विधा माना गया है। भूदेव मुखोपाध्याय ने सर्वप्रथम बंगला में उपन्यास शब्द का प्रयोग 1862 ई० में किया तथा हिन्दी भाषा में उपन्यास शब्द का पहला प्रयोग 1875 ई० में हुआ[2]। हिन्दी भाषा के पहले उपन्यास की अगर चर्चा की जाए तो इस विषय पर मतैक्य नहीं है, किन्तु सर्वसम्मति से हिन्दी के पहले उपन्यास का गौरव सन् 1882 ई० में लाला श्रीनिवास द्वारा रचित 'परीक्षागुरु' को दिया जाता है। उपन्यास लेखन की नींव भारतेन्दु युग में रखी गयी थी परंतु उसे सही रूपाकार और व्यापकता प्रेमचन्द युग मे मिली। भारतेन्दु युग में लिखे गए उपन्यासों पर संस्कृत कथा साहित्य के साथ-साथ बंगला के उपन्यासों की स्पष्ट छाया दिखाई देती है। इस समय सामाजिक, ऐतिहासिक, जासूसी, रोमानी आदि उपन्यासों का सृजन हुआ। इन उपन्यासों का उद्देश्य तत्कालीन समाज में व्याप्त विभिन्न कुरीतियों को उजागर करने के साथ-साथ उनका विरोध करना और अपनी दृष्टि से उनका समाधान प्रस्तुत करना था।

हिंदी से इतर अन्य भारतीय भाषाओं में लिखे आदिवासी उपन्यास-

आदिवासी उपन्यास का आरंभ हिन्दी साहित्य में एक बड़ी उपलब्धि है। जिसमें आदिवासी जीवन, संस्कृति, परम्पराएं और उनके संघर्षों को केंद्रित किया गया है। आदिवासी उपन्यासों का यह दौर 20वीं सदी के मध्य में

[1] सहायक प्राध्यापक, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी, rajmeena@bhu.ac.in

[2]राय, गोपाल, हिंदी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2019, पृष्ठ-23

शुरू हुआ और इसमें कई प्रमुख विशेषताएं और रचनाएं शामिल हैं। भारतीय साहित्य में आदिवासी जीवन और संस्कृति को दर्शाने वाले कई उपन्यास विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखे गए हैं। बंगला भाषा में गिरिजाकुमार माथुर का 'महाश्वेता' तथा 'समर सेन' का 'चौकड़ी' उपन्यास प्रमुख है। 'महाश्वेता' उपन्यास एक आदिवासी महिला की कहानी है, जो अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती है। यह कहानी महाश्वेता नाम की एक युवा आदिवासी महिला के इर्द -गिर्द घूमती है, जो अपनी पहचान और सामाजिक स्थिति को लेकर जूझ रही है। उपन्यास में उसकी प्रेम कहानी, पारिवारिक संबंध और समाज में उसकी स्थिति को दर्शाया गया है। महाश्वेता का संघर्ष न केवल व्यक्तिगत है, बल्कि यह आदिवासी महिलाओं की सामाजिक स्थिति को भी उजागर करता है, जहाँ वे अपने अधिकारों और स्थान के लिए लड़ती हैं।

उड़िया भाषा में सुभद्राकुमारी चौहान का 'मधुशाला' उपन्यास है जो आदिवासी जीवन को बड़े ही मर्मस्पर्शी रूप में स्पर्श करती है। तमिल में सुब्रह्मण्य भारती का 'पेरियास्वामी' तथा तिरुनेलवेली कन्नन का 'कुंडलिनी' उपन्यास बहुचर्चित है। 'पेरियास्वामी' एक तमिल उपन्यास है जो एक आदिवासी युवक की कहानी को दर्शाता है, जो अपने गाँव और समुदाय के लिए संघर्ष करता है। पेरियास्वामी अपने आदिवासी समुदाय के लिए बेहतर जीवन की तलाश में निकलता है। यह उपन्यास सामाजिक असमानता, जातिवाद और शिक्षा की कमी जैसे मुद्दों को उठाता है। पेरियास्वामी का संघर्ष उसके व्यक्तिगत विकास और उसके समुदाय की भलाई के लिए प्रेरित होता है।

तेलुगु भाषा में राजू शंकर द्वारा रचित 'काकातिया' और चंद्रशेखर कंबार द्वारा लिखित 'नागुला बंडा' अत्यंत महत्वपूर्ण उपन्यास है। 'काकातिया' उपन्यास काकातिया समाज से संबंधित है। यह उपन्यास एक आदिवासी राजा के इर्द -गिर्द घूमती है, जो अपने साम्राज्य की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहा है। इस उपन्यास में युद्ध, प्रेम, और सत्ता के संघर्ष को दर्शाया गया है। काकातिया का चरित्र न केवल योद्धा के रूप मे दिखाया गया है, बल्कि वह अपने लोगों के प्रति जिम्मेदार और संवेदनशील भी है। यह उपन्यास आदिवासी संस्कृति और उनके इतिहास को जीवंत रूप में प्रस्तुत करता है।

कन्नड़ भाषा में आदिवासी समाज पर केंद्रित उपन्यासों में कुमार स्वामी द्वारा रचित 'संघर्ष' उपन्यास का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। 'संघर्ष' उपन्यास आदिवासी जीवन की कठिनाइयों और उनके संघर्ष को दर्शाता है। यह कहानी एक आदिवासी परिवार के चारों ओर घूमती है जो अपनी पहचान और अस्तित्व के रक्षा के लिए लड़ रहा है। उपन्यास में सामाजिक असमानता, शिक्षा की कमी, और स्वास्थ्य सुविधाओं की अनुपलब्धता जैसे मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है। यह कहानी आदिवासी समुदाय की एकजुटता और उनके संघर्ष को प्रेरित करती है, जिसमें वे अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाने के साथ अपने लिए एक बेहतर भविष्य की तलाश करते हैं। इस उपन्यास में आदिवासी जीवन के विभिन्न पहलुओं को दर्शाया गया है, जो न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है,बल्कि समाज में जागरूकता बढ़ाने का कार्य भी करते हैं।

मलयालम भाषा में मुरलीधरन का 'आदिवासी' तथा शंकर पिल्लई का 'कुंडलिनी' महत्वपूर्ण उपन्यास है। 'आदिवासी' उपन्यास की रचना 1954 में 'मुरलीधरन' द्वारा कई गई। यह उपन्यास आदिवासी जीवन की वास्तविकता को उजागर करता है, इसमें आदिवासी समाज की परम्पराएं संस्कृति, और उनके संघर्षों का वर्णन किया गया है। यह उपन्यास आदिवासी जीवन पर पूर्ण रूप से केंद्रित है तथा इसका प्रमुख उद्देश्य आदिवासी लोगों के कठिनाइयों पर प्रकाश डालना था। 'कुंडलिनी' एक अद्भुत कथा है जो एक युवा आदिवासी महिला की कहानी को दर्शाती है। वह स्त्री अपनी आंतरिक शक्ति और पहचान की खोज में निकलती है। कुंडलिनी एक साधारण गाँव की लड़की है जो अपनी जीवन यात्रा में विभिन्न चुनौतियों का सामना करती है। यह उपन्यास न केवल उसके व्यक्तिगत विकस की कहानी है, बल्कि यह आदिवासी स्त्रियों की शक्ति और संघर्ष को भी उजागर करता है। कुंडलिनी का सफर आत्म-खोज, आत्म-विश्वास और समाज में बदलाव लाने की दिशा में प्रेरित करता है।

How to cite: मीणा, र. क. (2025). आदिवासी उपन्यास का विकास. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 39-47. https://doi.org/10.64006/mmrj/1206

गुजराती भाषा लिखित में 'धीरज रावल' का 'जंगल की कहानी' एक प्रमुख उपन्यास है। यह उपन्यास आदिवासी समुदाय के जीवन और उनके जंगलों के साथ गहरे संबंध को दर्शाता है। यह कहानी उन आदिवासियों के बारे में है जो जंगल में रहते है और अपनी परम्पराओं और सांस्कृतिक धरोहर को बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। उपन्यासों में जंगल के महत्व, प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा, और बाहरी दुनिया के प्रभाव को दर्शाया गया है। यह कहानी न केवल जंगलों के संरक्षण की आवश्यकता पर बल देती है, बल्कि आदिवासी लोगों के अधिकारों और उनके जीवनशैली की भी रक्षा करती है ।

शंकर पारीक का 'भँवरों की गूंज' राजस्थानी भाषा का एक उपन्यास है जो आदिवासी जीवन, उनकी संस्कृति और संघर्ष को दर्शाता है। इस उपन्यास में एक युवा आदिवासी व्यक्ति की कहानी है, जो अपने गाँव और समुदाय के लिए संघर्ष करता है। यह कहानी उन सामाजिक और आर्थिक चुनौतियों को उजागर करती है जिनका सामना आदिवासी लोग करते हैं। इस उपन्यास में भूमि अधिग्रहण, जंगलों की कटाई और बाहरी लोगों द्वारा उनके अधिकारों का हनन आदि जैसी प्रमुख समस्याओं के केंद्र में लाया गया है। उपन्यास में प्रेम, त्याग और सामुदायिक एकता के तत्व भी शामिल हैं, जो आदिवासी जीवन की जटिलताओं को दर्शाते हैं।

आदिवासी उपन्यास का हिन्दी साहित्य में आगमन साहित्य के विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान था। आदिवासी उपन्यासों ने आदिवासी समाज की आवाज को साहित्य में मुखर रूप में प्रस्तुत किया। आदिवासी उपन्यासों की इस शुरुआत ने साहित्यिक दृष्टि के साथ-साथ आदिवासी समाज के अधिकारों और उनकी समस्याओं के प्रति जागरूकता बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

हिन्दी में लिखे आदिवासी उपन्यासों की धारा-

आदिवासी उपन्यास के माध्यम से आदिवासियों के जीवन की समस्याएं जैसे भुखमरी, गरीबी, आदिवासी बनाम प्रशासन संघर्ष आदि पर ध्यान केंद्रित करने का प्रयास किया गया है। हिन्दी उपन्यास में आदिवासी जीवन पर लिखने वाले अनेक रचनाकार हैं। जिसमें मूलतः दो धारा के लेखक शामिल हैं। पहली धारा के उपन्यासकारों में गैर आदिवासी लेखकों एवं दूसरी धारा के लेखकों में आदिवासी उपन्यासकारों को शामिल किया गया है। पहली धारा में शामिल गैर आदिवासी लेखकों की तरफ ध्यान केंद्रित करें तो हम देखते हैं कि इनका लेखन आदिवासी के कुछ पहलुओं तक ही सीमित था, जैसे कि आर्थिक समस्या, गरीबी, भुखमरी, समाज में अंधविश्वास की व्याप्ति, आदिवासियों पर कंपनी का दुष्प्रभाव आदि भी इनके लेखन के केंद्र में रहा। इस धारा में कुछ लेखकों का नाम अपवादस्वरूप भी लिया जा सकता है। जैसे 'लोकबाबू' और 'अश्विनी कुमार पंकज'। गैर आदिवासी उपन्यासकारों में संजीव का 'धार', 'जंगल जहाँ शुरू होता है', 'सावधान नीचे आग है', रणेन्द्र का 'ग्लोबल गाँव के देवता', 'गायब होता देश', महुआ माजी का 'मरंग गोडा नीलकंठ हुआ', रमणिका गुप्ता का 'सीता' और 'मौसी', राजेन्द्र अवस्थी का 'सूरज किरन की छाँव', 'जंगल के फूल' विनोद कुमार का 'समर शेष है', अश्विनी कुमार पंकज का 'माटी माटी अरकाटी', गुलशेर खां शानी का 'साँप और सीढ़ियाँ', 'शालवनों का द्वीप', तेजिंदर का 'काला पादरी', मैत्रेयी पुष्पा का 'अल्मा कबूतरी', देवेन्द्र सत्यर्थी का 'रथ के पहिये', 'ब्रह्मपुत्र' राकेश वत्स का 'जंगल के आस-पास', पुन्नी सिंह का 'सहराना', मनमोहक पाठक का 'गगन घटा घहरानी है', रांगेय राघव का 'कब तक पुकारूँ', अजित का 'अरण्य में सूरज', योगेन्द्रनाथ सिन्हा का 'वनलक्ष्मी', 'वन के मन में', लोकबाबू का 'बस्तर बस्तर', राकेश कुमार सिंह का 'जो इतिहास में नहीं है' और मधुकर सिंह का 'बाजत अनहद ढोल' आदि प्रमुख उपन्यास हैं। दूसरी धारा पर ध्यान केंद्रित करते हैं तो हम पातें हैं कि आदिवासी लेखकों के उपन्यासों में समाज की समस्याओं के साथ-साथ उनकी संस्कृति की सुंदरता, प्रकृति प्रेम एवं अनेक आदिवासी परंपराओं का भी स्त्रोत मिलता है। आदिवासी लेखक अपने उपन्यासों में आदिवासी परंपराओं पर खतरे के साथ-साथ होने वाले शोषण की व्यथा-कथा को भी यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश करते हैं। आदिवासी उपन्यासकार द्वारा लिखित आदिवासी जीवन पर केंद्रित उपन्यास की बात करें तो वाल्टर भेंगरा तरुण का 'शाम की सुबह', 'लौटते हुए', हरिराम मीणा का 'धूणी तपे तीर', 'डाँग', 'ब्लैकहोल में स्त्री', पीटर पाल एक्का का 'जंगल के गीत', 'पलास के

How to cite: मीणा, र. क. (2025). आदिवासी उपन्यास का विकास. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 39-47. https://doi.org/10.64006/mmrj/1206

फूल', 'सोन पहाड़ी', 'मौन घाटी' और जोराम यालाम का 'जंगली फूल' आदि आदिवासी जीवन पर लिखे गये चर्चित एवं महत्वपूर्ण उपन्यास हैं।

वाल्टर भेंगरा 'तरुण' द्वारा लिखा गया उपन्यास **'शाम की सुबह'** एक आदिवासी नर्स संध्या के जीवन संघर्ष को केंद्र में रखकर लिखा गया है। यह उपन्यास सन् 1981 में प्रकाशित हुआ। उपन्यासकार ने इसमें नारी अंतर्मन के भावों को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह उपन्यास अपने जीवन की विडंबनाओं एवं अपने कर्तव्य के लिए संघर्षरत एक आदिवासी नर्स की कथा है। इसमें मनुष्य के सभी प्रकार के भाव जैसे प्रेम, घृणा, प्रलोभन, क्षमा, त्याग आदि का बखूबी समावेश किया गया है। आदिवासी समाज में जन्मी संध्या अपने घर को चलाने के लिए शहर जाकर नौकरी करती है। वह शहर की दिनचर्या में इतनी व्यस्त हो जाती है कि उसका अपने गाँव से जैसे रिश्ता ही टूट गया हो। इसी संबंध में वाल्टर भेंगरा 'तरुण' अपने उपन्यास में कहते हैं कि **"आज पारिवारिक जीवन जिस तरह के संबंधों और वातावरण में कट रहा है, उसमें उसके सदस्य एक-दूसरे से अपरिचित होते जा रहे हैं। कुछ ऐसा लगता है कि रक्त-भर का संबंध उनके बीच रह गया है।"**[3] संध्या एक विवेक सम्पन्न, सहृदय और संवेदनशील स्त्री है। संध्या भारतीय परिपाटी पर चलने वाली स्त्री की भाँति अपने परिवार के लिए अपनी सभी इच्छाओं का दमन करती है। गाँव से दूर होकर शहर के कठिन जीवन की विभिन्न विडंबनाओं एवं कठिनाइयों से जूझते हुए वह सदैव आगे बढ़ने का प्रयत्न करती है। अंततः वह अपने अंधकारमय जीवन को दूर कर उसे प्रकाशित करती है। इस संदर्भ में वाल्टर भेंगरा 'तरुण' लिखते हैं कि- **"उसकी जिंदगी सूर्यास्त की दिशा में जा रही थी। किन्तु अब उसे लगने लगा था कि यह सूर्यास्त नहीं, शाम की सुबह थी- शाम की सुबह।"**[4]

इस प्रकार यह उपन्यास एक आदिवासी स्त्री के जीवन संघर्ष की दास्तान है जो अपने परिवार के जीवकोपार्जन हेतु अपने गाँव के सुंदर व्यत्वरण को छोड़कर शहर की आपाधापी में फँस जाती है। शहर की चकाचौंध से ऊबकर वह वापिस अपने गाँव की ओर रुख कर लेती है।

पीटर पॉल एक्का द्वारा रचित **'जंगल के गीत'** उपन्यास आदिवासी संस्कृति पर केंद्रित है। इसका प्रकाशन सन् 1999 में हुआ। जिसमें उन्होंने आदिवासी समाज के जीवन एवं संघर्ष का सजीव चित्रण किया है। लेखक उपन्यास में आदिवासी समाज के प्रकृति प्रेम से लेकर अंग्रेजों के साथ ऐतिहासिक संघर्ष का वर्णन करते हुए उलगुलान विद्रोह का भी जिक्र करते हैं। उच्च वर्ग द्वारा आदिवासी समाज पर किए गए शोषण को दिखने के साथ ही उन्होंने आदिवासी समाज की चेतना एवं संघर्ष को बड़े ही मुखर रूप में प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास पहाड़ की तराई में बसे तूंबा घाटी के आदिवासी उरांव समाज के जीवन संघर्ष को बड़ी ही सहजता से दिखाता है। आदिवासी समाज के लोग 'उरांव खद्दी' मनाने की तैयारी में हैं। चारों तरफ लोग उत्साह एवं उमंग से अभिभूत हैं, अभावों से घिरे होने के बाद भी आदिवासी समाज अपने त्योहारों को बड़ी ही प्रसन्नतापूर्वक मनाते हैं। **"घर में चाहे खाने को ज्यादा कुछ न हो पर वे गीत गाएंगे जरूर, आधे पेट में भी नाचेंगे।"**[5] उपन्यास का मुख्य नायक करमा है। करमा अपने आदिवासी समाज के उत्थान के लिए सजग है। वह बिरसा को अपना महानायक मानता है। बिरसा से प्रेरित होकर वह गाँव वालों में अपने अधिकारों के लिए सचेत करते हुए उन्हें प्रेरित करता है। करमा की तरह ही पूरे गाँव वाले बिरसा को अपना महानायक मानकर अंग्रेजों के खिलाफ़ आजादी की लड़ाई में करमा का साथ देते हैं। करमा व उनके साथी आजादी के लिए अपने प्रेम तक को कुर्बान करने के लिए तैयार हैं। करमा आजादी के लिए अंग्रेजों के विरुद्ध होने वाले संघर्ष में हँसते-हँसते अपने प्राणों को कुर्बान कर देता है। अपने शहीद होने के साथ ही वह आदिवासी समाज को यह संदेश दे गया कि एक दिन उन्हें आजादी अवश्य मिलेगी। **"करमी ने करमा की अंतिम इच्छा पूरी कर दी। उसने करमा को अपनी गोद में सुला दिया और आँचल से चेहरा पोंछने**

[3] तरूण, वाल्टर भेंगरा, शाम की सुबह, अनुज्ञा बुक्स, संस्करण 2021, पृष्ठ-67
[4] तरूण, वाल्टर भेंगरा, शाम की सुबह, अनुज्ञा बुक्स, संस्करण 2021, पृष्ठ-142
[5] एक्का ,पीटर पॉल ,जंगल के गीत ,सत्य भारती प्रकाशन ,झारखंड ,संस्करण2013 , पृष्ठ-127

लगी। करमा ने आँखें खोली और चारों ओर देखने लगा-चारों ओर एक प्यारी-प्यारी सी धरती थी, और उस धरती पर बसने वाले अपने लोग थे। अपनी जन्मभूमि को देख लेने की खुशी करमा की बुझती आँखों में एक चमक बनकर दो पलों के लिए खिल उठी थी।"[6]

इस प्रकार यह उपन्यास आदिवासी समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक परिवेश के साथ उनके संघर्षों को भली-भांति चित्रित करता है। अंत में यह संदेश देता है कि आदिवासी समाज अपने हक के लिए सदैव संघर्षरत रहने को तैयार हैं।

वाल्टर भेंगरा 'तरुण' द्वारा रचित उपन्यास **'लौटते हुए'** सन् **2005** में प्रकाशित हुई। यह उपन्यास आदिवासी युवा पीढ़ी का अपने संस्कृति से विमुख होकर शहर की चकाचौंध में फँसने एवं जल्द ही उससे मोहभंग के बाद वापस अपनी संस्कृति की ओर लौटने की कथा है। वैश्वीकरण, उदारीकरण एवं पूंजीवाद के इस दौर में आदिवासी समुदाय की पहचान और उसके अस्तित्व पर गहरा संकट छाया हुआ है। ऐसे समय में आदिवासी समाज अपनी संस्कृति एवं परंपराओं के जरिए ही अपनी पहचान को बचाकर रखता है। उपन्यास की नायिका सलोमी इसका जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करती है। वह शहर की चकाचौंध को देखकर तेजी से उसकी ओर आकृष्ट होती है। जिसके कारण वह अपनी संस्कृति को पीछे छोड़कर शहर की चकाचौंध रूपी मरीचिका में खो जाती है, किन्तु जल्द ही उसे भान होता है कि यह दुनिया उसके लिए नहीं है। अपनी संस्कृति के महत्व एवं बाहरी दुनिया के दोहरे चरित्र को समझने के पश्चात वह उस शहरी संस्कृति का परित्याग कर अपने गाँव, अपनी संस्कृति की ओर लौट आती है। हरिराम मीणा ने इस संदर्भ में अपने विचार व्यक्त किये हैं- **"इस कृति में झारखंड अंचल की ऐसी महिलाओं के दुख व शोषण की अभिव्यक्ति दी गई है जिन्हें रोजगार की तलाश में दूरस्थ महानगरों एवं अन्य राज्यों की ओर पलायन करना पड़ता हैं। ऐसा पलायन तो पुरुष भी करते हैं लेकिन स्त्रियों की पीड़ा विशेष स्वरूप रखती हैं। उनका शोषण बहुआयामी होता है जिसमें दैहिक शोषण अलग किस्म की पीड़ा देता है। अपनी जमीन से विस्थापन आदिवासी समाज के सामने सबसे बड़ी चुनौती है, चाहे वह जबरन हो या रोजगार की तलाश में। ऐसी चुनौती के एक जरूरी पक्ष को उजागर करना इस उपन्यास को महत्वपूर्ण बनाता है।"**[7]

हरिराम मीणा द्वारा रचित उपन्यास **'धूणी तपे तीर'** हिन्दी आदिवासी उपन्यासों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचना है। इसका प्रकाशन सन् 2008 में हुआ। यह उपन्यास 1913 में मानगढ़ की पहाड़ियों पर हुए आदिवासी 'जलियाँवालाबाग कांड' की घटना पर केंद्रित है। इस उपन्यास में लेखक ने राजस्थान के मानगढ़ घटना को केंद्रित कर नायक गोविंद गुरु के माध्यम से ऐतिहासिक व्यक्तित्व को फिर से जीवित कर साक्ष्यों और सूचनाओं का सहारा लेकर 19वीं सदी के उत्तरार्ध और 20वीं सदी के आरंभिक वर्षों में मेवाड़ और वागड़ अंचल में आदिवासी जीवन में घटी घटनाओं को मूर्त किया है। उपन्यासकार ने इसमें बड़े ही प्रखरता के साथ दिखाया है कि किस प्रकार अंग्रेजी हुकूमत अपनी सत्ता की स्थापना के लिए देसी रियासतों के राजा-महाराजा का अपने अनुसार प्रयोग किया करती थी। देशी रियासतों के राजा आपस में छोटी-छोटी बातों पर लड़ा करते थे जिसके बीच अंग्रेज फूट का बीज परिपक्व रूप में डालकर उन्हें अपने ही लोगों के खिलाफ कर देते थे। उपन्यास का नायक गोविंद गुरु आर्य दयानंद सरस्वती के प्रभाव के कारण जन्म से बंजारा होने के बावजूद अपने आस-पास के आदिवासी समाज के प्रति संवेदनशील रहता है। गोविंद गुरु आदिवासी समाज को अपने अधिकारों के लिए जागरूक करने की कोशिश करता है। गोविंद गुरु ने आदिवासी समाज की समस्याओं को दो भाग में रेखांकित कर उनकी समस्याओं से सभी को अवगत कराने का प्रयास करता है। ये समस्याएं दो रूपों में उभरकर आती हैं। पहली, आदिवासी समाज की आंतरिक समस्याएं। दूसरी, आदिवासियों पर राज द्वारा थोपी गई समस्याएं। गोविंद गुरु अपने अन्य साथियों जैसे कुरिया दनोत, पुंजा धीरा, थावरा आदि की मदद से संप सभा का गठन कर आदिवासी समस्याओं से से लड़ने का प्रण लेता है। संप-

[6] एक्का, पीटर पॉल, जंगल के गीत, सत्य भारती प्रकाशन, झारखंड, संस्करण 2013, पृष्ठ-191
[7] मीणा, हरिराम, आदिवासी दुनिया, नैशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, संस्करण 2013, पृष्ठ-90

How to cite: मीणा, र. क. (2025). आदिवासी उपन्यास का विकास. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 39-47. https://doi.org/10.64006/mmrj/1206

सभा की मदद से वह गाँव-गाँव में धूणी धामों की स्थापना करता है। ये धूणी धाम धीरे-धीरे आदिवासी समाज के लिए जागृति की लौ बन जाते हैं। गोविंद गुरु आदिवासी समाज के उत्थान में मुख्य बाधक उनमें व्याप्त नशे की लत को समझता है। उसका मानना था कि जब तक आदिवासी समाज इस नशे की लत से मुक्त नहीं होंगे तब तक वे अपने अधिकारों की लड़ाई संपूर्णता में नहीं लड़ सकते हैं। आदिवासियों को पहले नशा से मुक्त होना होगा फिर वे अपने अधिकारों की बात को प्रशासन के समक्ष प्रखर रूप में रख पाएंगे। इस सबको देखते हुए नशाखोरी का विरोध करते हुए गोविंद गुरु कहते हैं,**"मैं यह बात कतई नहीं मानता कि कोई भी नशा आदमी को आराम देता है। हर प्रकार का नशा शरीर व मन को बीमार करता है। जब से आदिवासियों ने नशा छोड़ने का काम शुरू किया है हजारों घर-परिवार उजड़ने से बच गए हैं।"**[8]

इस प्रकार यह उपन्यास संप सभा के माध्यम से हुए उन बदलावों और अंग्रेजों द्वारा उसके दमन व सैकड़ों आदिवासियों की कुर्बानी का उपन्यास है।

'पलाश के फूल' पीटर पॉल एक्का द्वारा लिखा गया एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। जिसका प्रकाशन सन् 2012 में हुआ। उपन्यास का केंद्रीय पात्र शहर से आया इंजीनियर आनंद है। आनंद बाबू सरकार की कोकिला परियोजना के तहत आदिवासी क्षेत्र में आते हैं, जहां सभ्य समाज आने से कतराता है। आनंद बाबू को बहुत से लोग वहां जाने से मना करते हैं जो गैर आदिवासियों का आदिवासी समाज के प्रति संकीर्ण मानसिकता को दर्शाता है। उपन्यास में आदिवासियों के रोजमर्रा के जीवन में संघर्ष को बहुत ही सुंदर ढंग से चित्रित किया गया है। कठिन परिश्रम करने के बाद भी आदिवासी समाज बहुत ही विकट परिस्थितियों में कम सुख सुविधाओं में जीते हैं। अशिक्षित होने के कारण आदिवासी समाज सेठ और साहूकारों के चंगुल में आसानी से फँस जाते हैं और उनके शोषण का शिकार हो जाते हैं। आनंद बाबू आदिवासी समाज में व्याप्त अंधविश्वासों को दूर करने का प्रयास करते हैं क्योंकि उन्हें यह पता है कि अंधविश्वास ही उनके शोषण का सबसे बड़ा कारण है। गैर आदिवासियों के पास प्रशासन और पूंजीपतियों का साथ है जिससे वह आदिवासियों का शोषण बड़े ही आसानी से कर लेते हैं। गैर-आदिवासियों के इस चंगुल से आदिवासी समाज चाहकर भी नहीं निकल पाता है। ऐसा लगता है कि अब भटकना ही उनकी नियति बन गई है। आदिवासी स्त्री सलोमी कहती है,**"क्या करें आनंद बाबू, हम आदिवासियों का इतना ही भाग्य है। जमींदार, सेठ, साहूकार, शहरी बाबू सभी तो तंग करते हैं हमें। जीने कौन देता है? आज हम यहाँ हैं कल कहीं और होंगे। जंगल के जंगल, पहाड़-घाटियाँ जाने कहाँ-कहाँ भटकना होता है। सब तो भटकते ही जा रहे हैं।"**[9]

इस प्रकार यह उपन्यास आदिवासियों के संघर्षपूर्ण जीवन को दर्शाता है सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की विकास परियोजनाओं के चलते आदिवासियों के बार-बार विस्थापन की व्यथा की कहानी कहता है। उपन्यास में उनके प्रतिरोध का स्वर मुखर रूप से सामने नहीं आ पाता है। जिसके चलते आदिवासी समाज इसे ही अपनी नियति मानकर जीवन व्यतीत करते हैं।

पीटर पाल द्वारा रचित उपन्यास **'मौन घाटी'** अंबा घाट की पहाड़ियों में बसे कुसुमपुर गांव को केंद्रित करके लिखा गया है। यह उपन्यास सन् 2013 में प्रकाशित हुआ। उपन्यास में दिकुओ ने यहां के लोगों का जीवन बहुत ही कठिन बना दिया है। मनसुख जाल सिंह हरिया और सुब्बा राव जैसे शोषक आदिवासियों का बड़े स्तर पर शोषण करते हैं। वे गांव की स्त्रियों की अस्मिता से प्रतिदिन खेलते हैं। गांव के शिक्षित युवा किशोर और रजनी कॉलेज में हुई गर्मी की छुट्टियों में गांव वापस आते हैं, जिससे उन्हें गांव की अस्त व्यस्त स्थिति देखने को-मिलती है। गाँव में चारों तरफ विषाद से भरे लोग दिखाई पड़ते हैं। गैर-आदिवासी अपने स्वार्थ के लिए आदिवासी समाज के लोगों के भोलेपन का फायदा उठाते हैं और देवी-देवताओं के कोप से डराकर उनका शोषण करते हैं। गैर आदिवासी कंपाउंडर हरिया सरकार से मिलने वाली दवाइयों को आदिवासी समाज में वितरित नहीं करता है बल्कि

[8] मीणा, हरिराम, धूणी तपे तीर, साहित्य उपक्रम प्रकाशन, संस्करण 2022, पृष्ठ-121

[9] एक्का, पीटर पॉल, पलास के फूल, सत्य भारती प्रकाशन, झारखंड, संस्करण 2012, पृष्ठ-58

How to cite: मीणा, र. क. (2025). आदिवासी उपन्यास का विकास. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 39-47. https://doi.org/10.64006/mmrj/1206

उन्हें दुगने दाम पर बेच देता है। दूसरी तरफ अपने काम के प्रति समर्पित नर्स संध्या के आने से उसका धंधा ठप्प पड़ जाता है। आदिवासी इलाकों में विकास के नाम पर कई परियोजनाएं चलती हैं जिसका उन्हें कभी लाभ नहीं मिलता है। किशोर और रजनी अपने सभी पढ़े-लिखे आदिवासी भाई-बहनों को गांव लौटकर आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित करते हैं। किशोर द्वारा गांव के चुनाव में विजय प्राप्त करना वहां के लोगों में उम्मीद की एक नई किरण लेकर आता है। **"मौन घाटी में अब उम्मीदों की बयार बटने लगी थी, पूरे माहौल में सुकून था, उम्मीदें थीं, संघर्षों से आगे जाने का जज्बा था, अब लगा पंचवर्षीय योजनाएँ साकार होंगी, सुदूर जंगलों, घाटियों में भी आजादी की हवा बहेगी, नयी सभ्यता से दूर तरक्की से महरूम आदिवासियों के घर-आँगन बिजली की रोशनी से जगमगा उठेंगे। महात्मा गाँधी का सपना साकार होगा। मौन घाटी में तब आदिवासियों के ढोल, माँदर, नगाड़े बजेंगे, खुशहाल फिजा होगी गाते पंछी होंगे और एक उन्मुक्त आकाश होगा।"**[10]

इस प्रकार यह उपन्यास कुसुमपुर गांव के आदिवासी समाज के संघर्षपूर्ण जीवन को दर्शाता है और आदिवासियों का गैर आदिवासियों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए विजय तक पहुंचने की कहानी को प्रदर्शित करता है।

जयपाल जूलियस हन्ना से सम्मानित उपन्यास **'डकैत देव सिंह भील के बच्चे'** सुनील गायकवाड़ द्वारा सन् 2022 में लिखा गया है। इस उपन्यास की विशेषता है कि यह आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। यह उपन्यास लेखक के अपने दादा देव सिंह भील पर आधारित है जो भवाली गांव के प्रसिद्ध डाकू हैं। लेखक के पिता अपने पिता के रास्ते पर ना चल कर दूसरा रास्ता अपनाते हैं और उन्हीं के कहे अनुसार लेखक भी पढ़ाई का रास्ता चुनता है। अपने माता-पिता द्वारा दिए गए शिक्षा के मार्ग पर ही आगे चलकर लेखक को कामयाबी मिलती है। देवसिंह अंग्रेजी हुकूमत सेठ साहूकारों के अत्याचार से तंग आकर डाकू बनने को मजबूर हो जाता है इसीलिए वहां के लोग उसे डाकू ना समझ कर सच्चा क्रांतिकारी कहते थे। देवसिंह जैसे अन्य लोग भी खुद को डाकू ना समझ कर सच्चा क्रांतिकारी कहते थे। ये लोग क्रूर दमनकारी गोरी सरकार से माल लूट कर गरीबों में बांटते थे जिससे यह लोग गरीबों के मसीहा बन गए। यह उपन्यास अंग्रेजों एवं साहूकारों द्वारा भीलों के शोषण और अत्याचार को दर्शाता है। स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता के पश्चात् भीलों के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया, जिसे लेखक ने बड़े मार्मिक शब्दों में लिखा है। **"हमारा देश कब आजाद हुआ अप्पा को ये पता नहीं। वह समझा नहीं, स्वतंत्रता किसको बोलते हैं। बात वैसी ही है। ब्रिटिश काल में जितना दर्द हुआ। उतना ही स्वतंत्रता काल में महसूस किया। ऐसे में भील को आजादी और गुलामी में फर्क करना कहाँ से आता! भील जमात को अंग्रेजों ने गुनहगार जमाती के पंक्ति में दो नंबर पर रखा। पहला नंबर फासपारधी का और दूसरा भील का। स्वतंत्रता के बाद भी यही बात रही। कोई बदल नहीं किया।"**[11] इस प्रकार लेखक ने उपन्यास में अपने परिवार की कहानी के माध्यम से संपूर्ण भील समुदाय के जीवन की त्रासदी को उद्घाटित किया है। यह उपन्यास ब्रिटिश काल से लेकर वर्तमान समय तक भीलों की संस्कृति, भाषा, जीवन और संघर्ष को प्रस्तुत करता है।

'ब्लैकहोल में स्त्री' उपन्यास हरिराम मीणा द्वारा आदिवासी समाज को केंद्र में रखकर लिखा गया महत्वपूर्ण उपन्यास है। इसका प्रकाशन सन् 2023 में हुआ। यह उपन्यास आदिवासी समाज के बेड़िया समुदाय में वेश्यावृत्ति जैसी बुराइयों की प्रवेश होने की व्यथा-कथा है। ईस्ट इंडिया कंपनी ने रियासती इलाकों में गठजोड़ करते हुए साधारण जनता का शोषण किया। इतना लूटने के बावजूद अंग्रेजों के लालच की सीमा नहीं थी जिसके चलते उनकी नजर रियासतों एवं मैदानी इलाकों के बाद आदिवासी इलाकों पर पड़ी। जहाँ उन्हें आदिवासी इलाकों से पुरजोर विरोध का सामना करना पड़ा। अंग्रेजों द्वारा बनाई गई रणनीति का सबसे ज्यादा असर आदिवासी समाज पर पड़ा। आदिवासी समाज के सामने रोटी का संकट पैदा हो गया। विवश होकर अनेक आदिम समुदायों को चोरी

[10] एक्का, पीटर पॉल, जंगल के गीत, सत्य भारती प्रकाशन, झारखंड, संस्करण 2013, पृष्ठ-82, 83

[11] गायकवाड़, सुनील, डकैत देवसिंग भील के बच्चे, प्यार केरकेट्टा फाउंडेशन, झारखंड, संस्करण 2022, पृष्ठ-27

के अपनाने पड़े। बेड़िया समुदाय जैसे संगीत प्रेमी व विविध कलाओं में निपुण समुदाय रोजी रोटी के लिए भटकने लगा। इसी संकटपूर्ण समय में बेड़िया समुदाय में वेश्यावृत्ति जैसी बुराइयों का प्रवेश हुआ। बेड़िया समुदाय में जीवकोपार्जन हेतु देह व्यापार करना साधारण बात है। ये इस व्यापार को हेय दृष्टि से नहीं देखते हैं। इस समुदाय में जब कोई कन्या किशोरावस्था से युवावस्था में कदम रखती है तो उसे वेश्याकर्म में बड़ी ही धूम-धाम के साथ उत्सव मनाकर उतार दिया जाता है। लड़की को पहली दफा नाक में नथ पहनाई जाती है। बेझिझक सरेआम बाजार में लड़की की बोली लगाई जाती है। सर्वाधिक रकम अदा करने वाले पुरुष द्वारा लड़की की नथ उतराई की रस्म निभाई जाती है। उपन्यासकार ने वेश्याकर्म में लिप्त बेड़िया समाज की कथा को बड़े ही मार्मिक रूप में सबके समक्ष प्रस्तुत करता है। उपन्यास में आदिवासी स्त्री पूनम बेड़िनी द्वारा उमा नामक किशोरी को वेश्यावृत्ति के धंधे में उतार दिया जाता है। 'उमा' इस धंधे के लिए उसका बदला हुआ नाम है जिसका वास्तविक नाम निशा है। उपन्यास की नायिका उमा उर्फ निशा के भीतर सदैव उमा और निशा का द्वंद्व विद्यमान रहता है। हरिराम मीणा इस द्वन्द्व को दिखाते हुए कहते हैं- **"उमा के भीतर भी बहुत गहरे द्वन्द्व से कुछ कम घटित नहीं हो रहा था। भुरभुरी रेत की सूखी नदी सी वह लड़की जिसके एक किनारे को समेटे हुए थी निशा और दूसरे को उमा।"**[12] वेश्यावृत्ति के इस दलदल में फँसी उमा को शारीरिक तौर पर बाहर निकाल दिया जाता है किन्तु मानसिक तौर पर वह कभी इस दलदल से मुक्त नहीं हो पाती है। इस प्रकार यह उपन्यास आदिवासी समाज के बेड़िया समुदाय को केंद्र में रखकर लिखा गया है।

जंगली फूल उपन्यास आदिवासी युवा लेखिका जोराम यालाम नाबाम द्वारा लिखा गया है। यह सन् 2023 में प्रकाशित हुई। यह उपन्यास अरुणाचल प्रदेश के एक आदिवासी समुदाय न्यीशी को केंद्र में रखकर लिखी गई है। न्यीशी समुदाय की लोक कथाओं में प्रचलित है कि उनके पुरके तानी अर्थात पिता अनेक पत्नियाँ रखने वाले होते थे। ये मुख्यतः प्रेमविहीन, आवारा, एवं क्रूर माने जाते हैं। तानी अपना सारा जीवन एवं बुद्धि का इस्तेमाल केवल अलग-अलग औरतों को हासिल करने में लगा देते हैं। लोककथा के इसी मिथक को लेखिका बड़ी ही प्रखरता एवं तर्कों के साथ तोड़ती नजर आती हैं। लोककथा के इस प्रसंग पर लेखिका प्रश्न करती हैं और अपनी कल्पना से उस छवि को पुनःनिर्मित करने का प्रयास करती हैं। लेखिका कहती हैं, **"सोचती हूँ कि क्या सच में वह इतना केयर, नीच, स्वार्थी और डरपोक था? अपने को बचाने के लिए वह इस हद तक जा सकता था? क्या वंश बाधा लेने मात्र से ही कोई अमर हो जाता है? कोइ तो वजह रही होगी जिसके कारण आज तक लोग उसके नाम को भूल नहीं पाये हैं। कोई तो ऐसी वजह रही होगी जिसके चलते लोगों ने उसे 'पिता' कहा होगा।"**[13] यह उपन्यास आदिवासी न्यीशी समुदाय की ऐतिहासिकता एवं उसकी संस्कृति का एक प्रामाणिक चित्रण करती है। इसके साथ ही पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, विवेकहीन परंपराओं, स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार से संबंधित प्रथाओं से संघर्षरत आदिवासियों के जीवन को नए रूप में दिखाती है। इस उपन्यास में कई सशक्त स्त्री पात्रों को भी लिया गया है जो अपने घर परिवार के जीविका का संसाधन उपलब्ध कराती हैं। इस प्रकार यह उपन्यास न्यीशी समुदाय की लोककथाओं के प्रसंग के माध्यम से तानी की विकृत छवि के स्थान पर एक नई छवि ढूँढने का प्रयास है।

इस प्रकार आदिवासी उपन्यासों के माध्यम से हम देखते हैं कि आदिवासी साहित्य ने अपना दायरा कितना बढ़ा लिया है। उपन्यासों के माध्यम से आदिवासी उपन्यासकार अब अपने आदिवासी समाज की विभिन्न समस्याओं को बड़ी ही प्रखरता के साथ रखता है। इसके साथ ही आदिवासी समाज से संबंधित बनाए गए एक यूटोपिया का भी खंडन करता हुआ दिखाई पड़ता है। आदिवासी जीवन के संबंध में इसके पहले भी कई उपनयस लिखे गए लेकिन गैर आदिवासी उपन्यासकारों ने बिना किसी गहरी जाँच के ऊपरी तौर पर दिखने वाली चीजों को ही अपनी कहानियों में उद्घाटित किया। कई गैर-आदिवासी उपन्यासकारों ने आदिवासी समाज को लेकर केवल उसकी

[12] मीणा, हरिराम, ब्लैकहोल में स्त्री, राजपाल एण्ड संज, संस्करण 2023, पृष्ठ-17

[13] नाबाम, जोराम यालाम, जंगली फूल, राधाकृष्ण पेपरबैक्स, संस्करण 2023, पृष्ठ-05

रोमांटिकता का साहित्य बनाकर पेश कर दिया। वे आदिवासी समाज को बिल्कुल निःसहाय एवं करुण क्रंदन के साथ प्रस्तुत करते थे। लेकिन धीरे-धीरे आदिवासियों ने अपनी लेखनी को मजबूत किया और हिंदी साहित्य में आदिवासी साहित्य को संपूर्णता में लिखने की भरपूर कोशिश की। इस संबंध में कई उपन्यास लिखे जा चुके हैं और अभी कई उपन्यास लिखे जा रहे हैं।

How to cite: मीणा, र. क. (2025). आदिवासी उपन्यास का विकास. *Multidisciplinary Multilingual Research Journal, 1*(2), 39-47. https://doi.org/10.64006/mmrj/1206